पाकिस्तान का सफरनामा-३

स्तंभ/अनन्तर/जनसत्ता/१२ मार्च, २००६

कायद का कायदा

ओम थानवी

मैं कराची में हूं। मैं बीकानेर में हूं।

नहीं, मैं कराची से बीकानेर की तुलना नहीं करने जा रहा। बीकानेर राजस्थान का एक छोटा-सा शहर है। कराची महानगर है। कराची में समंदर है, जिसके करीब मैं खड़ा हूं। बीकानेर रेगिस्तान है। अरब की खाड़ी से कोसों दूर।

लेकिन एक इमारत है, जो मुझे उस शहर की घनघोर याद दिलाती है जहां मैं पढ़ा और बड़ा हुआ। याद ही नहीं दिलाती, इस इमारत की देहरी पर कदम रखने से पहले- सिर्फ पक्कोटे को देख- मैं घड़ी भर को कराची में मानो सरासर गैर-हाजिर हूं और बीकानेर में लालगढ़ पैलेस के किसी हिस्से में खड़ा हूं। वही काम, वही छज्जे, झरोखे, मेहराबें और कंगूरे। वही दरवाजे और खिड़कियां। और तो और, लाल बलुआ पत्थर भी वही!

यह क्या माजरा है?

यह मोहता पैलेस है। शहर के शानदार क्लिफ्टन इलाके में खड़ी यह इमारत कराची की ही नहीं, पाकिस्तान की सबसे शानदार जगहों में एक है। इमारतों में यह सबसे अहम होगी क्योंकि कायदे-आजम जिन्ना का नाम इससे जुड़ा है। जिन्ना की राजनीति में कदम-ब-कदम साथ चलने वाली उनकी बहन फातिमा जिन्ना अपने आखिरी वर्षों में इसी हवेली में रहती थीं। इसलिए इसे कस्र-ए-फातिमा (फातिमा का महल) भी कहा जाने लगा। १९६५ में जब उन्होंने फील्ड मार्शल अय्यूब खां के खिलाफ गवर्नर-जनरल का चुनाव लड़ा तो एकबारगी मोहता पैलेस जैसे पूरे मुल्क की राजनीति का केंद्र हो गया। लेकिन पाकिस्तान बनवाने में सीधी भूमिका निभाने वाली फातिमा जिन्ना, जिन्हें मुल्क ने मादरे-मिल्लत (राष्ट्रमाता) का खिताब दिया था, चुनाव हार गईं। इसके बाद उनका सार्वजनिक जीवन कमोबेश खत्म हो गया और वे 'कस्र' से बाहर भी कम निकलने लगीं।

फातिमा का इंतकाल मोहता पैलेस में हुआ। यहां से उनका जो जनाजा उठा, कहते हैं कराची में उसके बाद उतना बड़ा जनाजा नहीं देखा गया। फातिमा के बाद जिन्ना की दूसरी बहन शीरीनबाई यहां रहीं। उनके बाद यह 'महल' उजाड़ में तब्दील हो गया। इतने विशाल भवन को कौन संभाले और जिन्ना के घर में जाकर कौन रहे!

जब बेनजीर भुट्टो वजीरे आजम थीं, सिंध सूबे की हुकूमत ने उनसे गुजारिश की कि जिन्ना के नाम पर इस इमारत को खंडहर की शक्ल अख्तियार करने से बचाया जाए। बेनजीर ने- जो सिंध की हैं और कराची में समंदर किनारे जिनका अपना घर है- सात करोड़ रुपए खजाने से संस्कृति महकमे को जारी किए। छह करोड़ दस लाख रुपए देकर महकमे ने पहले मोहता पैलेस को जिन्ना के वंशजों से खरीदा और बची रकम उसके जीर्णोद्धार पर खर्च की। चार साल बाद- सितंबर १९९९ में- मोहता पैलेस एक अजायबघर के रूप में अवाम के लिए खोल दिया गया।

इस दास्तान से कायदे-आजम जिन्ना के व्यक्तित्व और चरित्र का एक दिलचस्प पहलू खुलेगा अगर आप अब जान लें कि मोहता पैलेस वास्तव में किसका घर था और कैसे वह जिन्ना के परिजनों की संपत्ति हो गया।

इसके लिए एक बार फिर बीकानेर की तरफ देखें। एक 'मोहता भवन' वहां भी है। यह बीकानेर की शानदार इमारतों में एक इमारत भर नहीं है। भुजिया-रसगुल्ले वाली ख्याति के बावजूद अगर बीकानेर को राजस्थान की सांस्कृतिक राजधानी कहा जाता है तो उसके यह दर्जा अर्जित करने में मोहता भवन की बड़ी भूमिका रही है। शहर का सांस्कृतिक रुतबा यों तो अनूप संस्कृत ग्रंथालय और पल्लू क्षेत्र में निकली जैन सरस्वती की मकराना प्रतिमा से ही कायम रहता, जिसे भाषाशास्त्री और पुरातत्त्वविद् तैस्सीतोरी ने ढूंढ़ा था। (उन्हें सरस्वती की एक-सी दो प्रतिमाएं मिली थीं; दूसरी दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में है।) मोहता भवन की गतिविधियों ने शिक्षा, साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में सार्थक काम किया। इनके केंद्र में तत्त्वचिंतक छगन मोहता थे। उन्होंने औपचारिक शिक्षा की कोई डिग्री हासिल नहीं की थी, मगर संस्कृति और दर्शन पर उनकी गहरी पकड़ थी। मानवेंद्रनाथ राय के वे निकट संपर्क में रहे लोगों में थे।

बीकानेर में मैंने करीब से मोहता भवन के आयोजन देखे हैं। नरोत्तमदास स्वामी, महावीर दाधीच, हरीश भादानी, नंदकिशोर आचार्य, शुभू पटवा आदि शहर के लेखक-पत्रकार मोहता भवन में रोज आते थे। जैनेंद्र कुमार, अज्ञेय, निर्मल वर्मा वहीं 'डाक्टर' छगन मोहता के साथ ठहरते थे। शिक्षाविद् अनिल बोर्दिया ने अपनी कई योजनाओं पर पहले-पहल वहीं चर्चा की।

लेकिन छगन मोहता ने यह भवन नहीं बनवाया था, न वे धनी थे। कराची में व्यवसाय करने वाले सेठ गोरधनदास मोहता के बड़े बेटे रामगोपाल ने– जिनके डॉ. मोहता सहायक थे– बीकानेर का मोहता भवन बनवाया था और मंझले बेटे शिवरतन ने कराची का मोहता पैलेस। गर्मी शुरू होने पर सेठ लोग ऊंटों पर सवार हो बहावलपुर और आगे रेलगाड़ी से कराची पहुंचते। सावन लगा तो वापस बीकानेर। बीकानेर में डॉ. छगन मोहता से हम सुनते थे कि कराची की हवेली बीकानेर के भवन से सुंदर है। तब मैंने यह कल्पना नहीं की थी कि बीकानेर के महाराजा गंगासिंह के कलात्मक लालगढ़– पिता लालसिंह के नाम पर निर्मित– की शैली हू-ब-हू दूर कराची में मौजूद होगी।

जब बीकानेर मैंने डॉ. श्रीलाल मोहता से इस बाबत बात की तो उन्होंने बताया शिवरतन मोहता का जन्म कराची में हुआ था, पर बचपन बीकानेर में बीता। लालगढ़ का निर्माण शुरू हुआ, तब वे और किशोरों की तरह उस तरफ सैर को जाया करते थे। १९२९ में जोधपुर के उम्मेद भवन पैलेस के निर्माण में उसके एक हिस्से का ठेका उन्होंने लिया और अगले साल कराची में अपना घर– मोहता पैलेस– बनाना शुरू कर दिया। मगर उम्मेद पैलेस की तरह आधुनिक हिंद्–यूरोपीय शैली में नहीं, लालगढ़ की पारंपरिक राजपूत–मुगल शैली में। इसके लिए दुलमेरा (बीकानेर के पास एक जगह) का बलुआ पत्थर भी कराची ले गए। इमारत पर बीस लाख रुपए का खर्च आया।

इस स्थापत्य की उसी पत्थर में एक और भव्य इमारत कराची में है, आरजीएम जिमखाना क्लब। आरजीएम यानी रामगोपाल 'जी' मोहता। बड़े भाई के नाम पर इसे भी शिवरतन मोहता ने बनवाया था। चालीस के दशक में शिवरतन मोहता सिंध के चोटी के उद्यमी हो गए थे। उनका चीनी का कारखाना बड़ा था, पर लोहे के कारोबार की वजह से 'आयरिन किंग' के नाम से जाने गए। अंग्रेजों ने उन्हें राव बहादुर, मानद मजिस्ट्रेट और 'जीपी' (जस्टिस ऑफ पीस) के खिताब दिए। समुद्र तट– जिसे हवा बंदर कहा जाता था– पर तब इक्के-दुक्के बंगले थे। बंटवारे के वक्त भी क्लिफ्टन में सिर्फ सत्रह घरों की आबादी थी जिनमें मोहता पैलेस एक था। बड़े लोग वहां ठहरा करते थे। गांधीजी भी।

बंटवारा होते-न-होते नए मुल्क की राजधानी बन रहे कराची के प्रशासन ने कई फौरी काम किए, उनमें चर्चित रहा मोहता पैलेस का अधिग्रहण! दिलचस्प बात यह है कि सेठ शिवरतन मोहता तब वहीं थे; उनका इरादा कराची छोड़ने का नहीं था। एक साल पहले, अगस्त १९४६ में, जब दंगे भड़के तो सेठ के बड़े भाई ने बीकानेर से पत्र लिखा कि कराची का कारोबार समेटने की तैयारी शुरू कर दो क्योंकि वह अब अलग मुल्क बनेगा। इस पर शिवरतन मोहता ने जवाब लिखा, ''अगर बंटवारा हुआ भी तो दोनों देश तरक्की करेंगे और कुशल व्यापारियों की सबको जरूरत रहेगी। इतने बड़े कारोबार और जमीन-जायदाद का यहीं पर रहना ठीक है।'' बरसों बाद बीकानेर में बड़े भाई के अमृत महोत्सव में सेठ ने अपना पछतावा जगजाहिर करते हुए कहा कि 'भाईजी' की सलाह और चेतावनी बजा थी।

लाखोंलाख दूसरे हिंदुओं की तरह शिवरतन मोहता कराची में रहने के ख्वाहिशमंद थे, यह १४ अगस्त १९४७ की शाम कराची में कायदे-आजम की ताजपोशी के मौके पर आयोजित समारोह में घटित वाकये से साफ होता है। इसका जिक्र सिंध के पहले प्रशासक और जिन्ना के करीबी अफसर रहे सैय्यद हाशिम रजा के संस्मरणों में मिलता है जिसके कुछ अंश १९८३ में छपे थे। फातिमा जिन्ना, हमेशा की तरह, वहां भी भाई का साया थीं। हाशिम रजा वाकये के वक्त जिन्ना की बगल में खड़े थे। रजा के अपने शब्दों में:

''राव बहादुर शिवरतन मोहता कराची के बेहद समृद्ध व्यवसायियों में थे। उनकी कराची में कई इमारतें थीं और वे खुद क्लिफ्टन के अपने घर में रहते थे जिसका नाम उन्होंने मोहता पैलेस रखा था। यह इमारत हमारे विदेश मंत्रालय के लिए अधिग्रहित कर ली गई।... अल्पसंख्यक समुदायों के मोअज्जिज नुमाइंदे गवर्नर जनरल हाउस में आयोजित स्वागत समारोह में आमंत्रित किए गए थे। शिवरतन मोहता कायद (जिन्ना) के पास आए और उन्हें गवर्नर जनरल बनने की मुबारकबाद पेश की। कायद ने उनसे हाथ मिलाया। मोहता ने, जिन्होंने अपने घर के अधिग्रहण पर एतराज किया था, सोचा कि यह अच्छा मौका होगा कि कायद से अधिग्रहण मुक्ति करने की गुजारिश की जाय। मैं कायद के नजदीक खड़ा था। उन्होंने मुझसे अधिग्रहण की वजह पूछी। मैंने बताया कि हमने वही घर अधिग्रहित किए हैं जिनके मालिकों के पास एक से ज्यादा इमारतें हैं। शिवरतन मोहता ने कहा कि मोहता पैलेस उन्हें सबसे अजीज है। बाद में उन्होंने जोर देकर घर वापस दिलाने का अनुरोध किया। कायद का जवाब था– 'शिवरतन मोहता, मैं आपके घर के अधिग्रहण को मुक्त करने में सक्षम नहीं हूं। आप इसके लिए सक्षम प्राधिकारी को अपील करें।'... शिवरतन मोहता मुल्क के मुखिया के मुंह से ये शब्द सुन कर हक्के-बक्के रह गए कि वे (गवर्नर जनरल) इमारत मुक्त करने के सक्षम अधिकार नहीं रखते।''

और सेठ मोहता ने घर और पाकिस्तान दोनों को छोड़ दिया।

अब ठीक तीन रोज पहले कराची में ही नवगठित संविधान-सभा में दिया गया कायदे-आजम का वह भाषण याद करें जिसे दुहराते हुए लालकृष्ण आडवाणी आज भी नहीं थकते। जिन्ना ने सभी धर्मों के लोगों से कहा था कि पाकिस्तान उनका है, वे आजाद हैं, सब नागरिक समान हैं, धर्म के आधार पर नए राष्ट्र में कोई भेदभाव नहीं होगा, धार्मिक दृष्टि से निजी आस्था को छोड़ कर राजनीतिक दृष्टि से राष्ट्र के सामने हिंदू हिंदू नहीं होंगे न मुसलमान मुसलमान रह जाएंगे, बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक की सभी दूरियां वक्त पाट देगा...।

बहुत से विद्वान जिन्ना के उस लंबे अंग्रेजी भाषण को दुनिया या इतिहास के लिए दिया हुआ मानते हैं। पाकिस्तान में समादृत इतिहासकार स्टेनली वोलपर्ट तीन पृष्ठों में इस भाषण के हवाले देने के बाद कहते हैं: ''वे (जिन्ना) आखिर क्या बोल रहे थे? क्या वे भूल गए थे कि वे कहां बोल रहे हैं? क्या घटनाचक्र के बवंडर ने उन्हें इतनी आत्मविस्मृति में ला छोड़ा था कि वे प्रतिपक्ष की दलीलें इस्तेमाल कर रहे

थे? क्या वे एक अखंड भारत की वकालत कर रहे थे- पाकिस्तान बनने की घड़ी में- जब लाखों भयभीत बेगुनाह काट डाले गए थे, लाखों अपने घर, खेत और अपने पुरखों के गांव छोड़ कर भाग रहे थे, गुमनामी के अंधेरे में या अजनबी जमीं पर पसरे किसी शिविर की शरण में?''

जाहिर है, जिन्ना महज तकरीर कर रहे थे। इतिहास अभी ताजा है और हमें नहीं पता कि जिन्ना कभी मारे जा रहे या भागते लोगों के बीच जाकर बैठे, उनमें रूबरू भरोसा पैदा करने की कोशिश की या मुल्क में हिंसा रोकने को कोई अपील की। यह ठीक है कि जिन्ना गांधी नहीं थे। उन्हें ओहदा भी दरकार था और जान भी प्यारी थी। लेकिन मोहता प्रसंग क्या यह जाहिर नहीं करता कि मुल्क छोड़ कर भागते 'समान' नागरिकों को जिन्ना ने नहीं रोका; मगर उन्हें रोकने में मदद भी नहीं की, जो रुकना चाहते थे।

कहा जा सकता है कि नई मुल्क की हुकूमत को इमारतों की जरूरत थी। मगर मोहता पैलेस को छोड़ शिवरतन बाकी इमारतें देने को तैयार थे। क्या नई हुकूमत के महत्त्वाकांक्षी अफसर जिन्ना को खुश करना चाहते थे? गौर करने की बात है कि जिन्ना पाकिस्तान बनने के बाद भी मुंबई का अपना बंगला अपने पास रखना चाहते थे; कभी-कभी वहां जाने-आने का मन रखते थे। भारत के उच्चायुक्त के समक्ष उन्होंने अपनी इस इच्छा का इजहार किया था। लेकिन जिन्ना पाकिस्तान बनने के अगले वर्ष ही टीबी बिगड़ने से चल बसे। मोहता पैलेस, जिसे नवगठित सरकार ने विदेश मंत्रालय को दिया था, बाद में जिन्ना के मुंबई के मलाबार हिल बंगले के 'एवज में' उनकी बहन और वारिस फातिमा जिन्ना को दे दिया गया। जिन परिस्थितियों में सरकार ने 'पैलेस' पर कब्जा किया था, उनका ख्याल करते हुए फातिमा जिन्ना को इसका कब्जा लेने से शायद इंकार कर देना चाहिए था क्योंकि जिन्ना के बाद वे मुल्क की सबसे सम्मानित नेता थीं। शायद किसी और की इमारत के लिए जिन्ना के वंशजों को भी छह करोड़ की रकम मंजूर नहीं करनी चाहिए थी। लेकिन फातिमा जिन्ना ही इसका रास्ता बना गई थीं। फातिमा ने बाकायदा एक हलफनामा देकर यह दावा किया था कि जिन्ना ने १९३९ में अपनी वसीयत में मुंबई का मकान उनके नाम किया था।

पर जिन्ना के मुंबई के उस बंगले पर पाकिस्तान सरकार का अब भी दावा है। मैं निजी तौर पर मानता हूं कि भारत सरकार को उनका दावा, रिश्ते सुधारने के सिलसिले में ही सही, मान लेना चाहिए। यह उनकी भावना का मामला है। कराची की इमारत में सेठ मोहता के वंशजों की अब शायद ही दिलचस्पी हो। पर प्रायश्चित के बतौर पाकिस्तान सरकार उसे कराची में प्रस्तावित वाणिज्य-दूतावास के लिए भारतीय उच्चायोग के सुपुर्द कर सकती है।

हां, सेठ मोहता का बाद में क्या हुआ? वे भारत चले आए। मुंबई में डेरा डाला। इंदौर में मालवा वनस्पति और फिर और काम-धंधे उन्होंने यहां बढ़ा लिए। सरकार में उनकी पैठ रही। पाकिस्तान के वजीरे आजम मोहम्मद अली दिल्ली आए तो डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने शिवरतन मोहता को राष्ट्रपति भवन में बुलवाया। १९५७ में उनके बड़े भाई 'आरजीएम' पचहत्तर वर्ष के हुए तो उपराष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन ने बीकानेर जाकर गीता पर रामगोपाल मोहता की लिखी टीका का विमोचन किया। उस किताब की भूमिका भी डॉ. राधाकृष्णन ने लिखी थी। अमृत महोत्सव में प्रधानमंत्री नेहरू और इंदिरा गांधी भी बीकानेर गए। उस मौके पर छपे मोहता अभिनंदन ग्रंथ में- जिसका संपादन दैनिक हिंदुस्तान के तब के संपादक सत्यदेव विद्यालंकार ने किया था- शिवरतन मोहता ने कराची के मोहता पैलेस के मामले में लिखा है:

''सन् १९३० में मैंने कराची में अपने रहने के लिए समुद्र तट पर वह मकान बनाना शुरू किया... मुझे उसको बनवाने का इतना शौक था कि मैं आपरेशन की हालत में भी पास के मकान से इस नए बनते हुए मकान को देखने और इंजीनियर को आदेश देने पहुंच जाया करता था। परंतु पूज्य भाई जी मुझे यही कहा करते कि तुम अपने रहने के लिए जो इतना बड़ा महल बनवा रहे हो वह उचित नहीं है। इससे तुम्हारा देह अहंकार बहुत बढ़ जाएगा और यह रजोगुणी काम एक दिन दुख का कारण बन जाएगा। मैंने आपके उपदेश पर उस मकान की योजना को कुछ कम कर दिया व बजाय तीन मंजिल के दो ही मंजिल बना कर समाप्त कर दिया। इस 'मोहता पैलेस' को लोगों ने बहुत पसंद किया।... अब पूज्य भाई जी के उन दिनों के सदुपदेश व चेतावनी याद आती है।''

मोहता पैलेस का विशाल बाग और दालान पार कर मैं भीतर दाखिल हुआ तो ध्यान इमारत की वास्तुकला से हट कर जिन्ना की शख्सियत को समझने की उधेड़बुन में भटक जाता था। सामने एक प्रदर्शनी में जिन्ना की बहुत बड़ी तस्वीर थी। सेठ मोहता का नाम तक कहीं अंकित न था। बाईं तरफ एक विशाल प्रदर्शनी में जिन्ना के जीवन की झांकी थी। कोई दो सौ तस्वीरें। उनमें सिर्फ एक तस्वीर में- जिसमें गांधीजी ने उनके कंधे पर हाथ रख रखा है- गांधी के साथ जिन्ना भी हंस रहे हैं; बाकी कोई दूसरी तस्वीर नहीं दिखाई दी जिसमें उनके खूबसूरत होठों की कोर पर कहीं मुस्कान भूले-भटके भी कौंधती हो!

क्या मैं उद्विग्न हूं? या यह मेरा दुराग्रह है? या यह राष्ट्रवाद की मार है? या अपने शहर की पुकार या एक पूंजीपति सेठ की जिलावतनी पर करुणा का प्रकोप है? बहुत उदार होकर सोचने की कोशिश करता हूं। मुझे सचमुच कोई कष्ट नहीं अगर जिन्ना सच्चे मुसलमान नहीं थे; शराब-सिगार पीते थे, सूअर का मांस खाते थे, विलायती सूट-बूट पहनते थे, बैंक के सूद से प्यार करते थे, दिल्ली वगैरह में अपनी जितनी संपत्ति बेच सकते थे बेच कर आए थे, कभी जेल नहीं गए, सिर्फ एक बार गिरफ्तार हुए वह भी लंदन में छात्र जीवन में एक छुट्टे झगड़े में, अक्खड़ थे, जिद्दी थे, खुद पारसी से शादी की पर बेटी ने की तो बेटी को छोड़ दिया, भारत को अंग्रेजी में भी हिंदू-स्तान बोलना पसंद करते थे आदि-इत्यादि।

मेरी दुविधा में असल गांठ वहां है, जहां खड़ा हूं। यह नैतिकता का मसला है। राष्ट्र बन जाने के बाद, कायदे-आजम के नाते ही नहीं, मुल्क की बागडोर थाम लेने के बाद भी दो चेहरे क्यों?

आडवाणी के मन में कराची पहुंच कर जिन्ना के प्रति श्रद्धा उमड़ी। आडवाणी को जिन्ना की 'धर्म-निरपेक्षता' रास आई, यह वाजिब है। गांधी की काट का यह भगवा तरीका होगा। वे इस्लाम के नाम पर मुल्क बनाएं और धर्म-निरपेक्ष कहाएं; आप हिंदू-राष्ट्र का सपना संजोएं और धर्म-निरपेक्ष माने जाएं। कथनी और करनी का फर्क सब जगह एक सतह पर ही तो चलता है। क्या सचमुच?

नहीं मालूम। पर मैं जिन्ना के मजार पर नहीं जा पा रहा। एक तो श्रद्धा नहीं उमड़ रही, तो दिखावा काहे का। दूसरे, कौन राजनीति करनी है। मजार के स्थापत्य की तारीफ सुनी-पढ़ी होती तब भी जाता। मंदिर-मस्जिद, गिरजे-गुरुद्वारों में कला देखने जाता ही हूं। लाहौर की शाही मस्जिद जाऊंगा। पर मजार के बारे में कराची के अगले सफर में सोचूंगा। हमारे यहां अधिकारी लोग जिन्ना के व्यक्तित्व के उजले पहलू पर रोशनी फेंक रहे हैं। आडवाणी की नीयत पर भले शक हो, उन विद्वानों की ईमानदारी पर मुझे शक नहीं है। उनके विचार मेरे ख्याल बदल सके तो मुझे अच्छा लगेगा। तब मैं खुशी-खुशी जिन्ना के मजार की जियारत कर आऊंगा।

अभी कराची को सलाम। अब यहां से निकलें।

वर्तमान की तलछट से अतीत की स्निग्धता में। घाटी की तरफ। यानी मूअन-जो-दड़ो।

फोटो कैप्शन

१. कराची का मोहता पैलेस

२. शिवरतन मोहता (बाएं) राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद से पाकिस्तान के वजीरे आजम मोहम्मद अली का परिचय कराते हुए